अनुक्रमणिका

प्रस्तावना 9

अनुवादक की ओर से 13

भूमिका

एक्हार्ट टॉल्ल 17

भाग एक

वर्तमान की शक्ति प्राप्त करना

अध्याय एक 21

बीइंग और एन्लाइटेनमैन्ट

अध्याय दो 33

भय का उद्भव

अध्याय तीन 39

'अब' में प्रवेश करना

अध्याय चार 53

अचैतन्यता को भंग करना

अध्याय पांच 63
वर्तमान में विद्यमान रहने की नीरवता व निश्चलता
में से ही उदित होता है सुन्दरम्

भाग दो

संबंध – आध्यात्मिक साधना के रूप में

अध्याय छः 77
अतीत के संचित दुख का अंत करना

अध्याय सात 91
लत जैसे संबंध से *एन्लाइटेन्ड* संबंध की ओर

भाग तीन

स्वीकार करना और समर्पण करना

अध्याय आठ 107
'अब' को स्वीकार करें

अध्याय नौ 133
रुग्णता व दुख को रूपांतरित करना

प्रकाशक की ओर से

प्रस्तावना

द पॉवर ऑफ़ नाउ का प्रकाशन भारत में सर्वप्रथम हमने जून 2001 में किया था। उस समय हमने बिल्कुल नहीं सोचा था कि इसकी शिक्षाओं का हज़ारों हज़ार भारतीयों पर इतना असाधारण व आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ेगा। शायद यही कारण है कि हमें इसके संस्करण बारंबार प्रकाशित करने पड़ रहे हैं, और इसका हिंदी अनुवाद भी। एक बहुपठित आध्यात्मिक पत्रिका में भी इसकी प्रशंसा में कहा गया है, "…. और उनकी पुस्तक *द पॉवर ऑफ़ नाउ* भारत में भी उस बैस्ट सैलर सूची में शामिल हो गई है जिसमें अनेक अध्यात्मवेत्ताओं को स्थान प्राप्त है। यह इस बात का प्रमाण है कि हम लोग किसी भी ऐसी शिक्षा का खुले मन से स्वागत करते हैं जो निष्कपट हो और हमारे हृदय को, हमारे जीवन को छूने वाली हो।"

एक्हार्ट 2002 में भारत यात्रा पर आये थे। उन्होंने चेन्नई और पांडिचेरी में श्रोताओं को संम्बोधित किया था और फिर ऋषिकेश में तीन दिवसीय एक रिट्रीट का भी आयोजन किया था। एक्हार्ट की यह पहली यात्रा मुम्बई में आयोजित दो संध्याकालीन वार्ताओं के साथ संपन्न हुई थी। सैंकड़ों लोग उन्हें सुनने के लिए आए थे।

हाल ही की अपनी फ्रांस यात्रा के दौरान मैं वहां के प्रसिद्ध गिरजाघरों में गया। भारत के बड़े मंदिरों में व्याप्त भीड़-भाड़ और शोर-शराबे के

विपरीत उनमें बहुत गरिमा व शांति थी। भारत से प्रस्थान करने से पहले मुम्बई की एक गली में सड़क किनारे बने एक मंदिर में मेरा जाना हुआ था। पीछे मुड़ कर देखता हूं तो पाता हूं वातावरण में पर्याप्त अंतर होने के बावजूद इस मंदिर में और उन गिरजाघरों में बिताए गए उन पलों में कुछ बड़ी समानता थी। और, मुझे अहसास हुआ कि ऐसा क्यों था और दोनों में क्या समानता थी। यह समानता वह अनुभूति थी जो कि 'भीतर' थी, न कि वह जो कि 'बाहर' थी। यह अपने ही भीतर की शांतता तथा निश्चलता की वह अवस्था थी – *बीइंग* की वह अवस्था थी – जो अधिकतर लोगों ने अपने जीवन में कभी न कभी अनुभव की होती है। एक्हार्ट इसे अदृश्य आंतरिक शरीर कहते हैं – यानी, इस दृश्यमान व साकार शरीर के भीतर विद्यमान एक चैतन्य उपस्थिति। *द पॉवर ऑफ़ नाउ* में वे कहते हैं, "इस बाह्य देह के भीतर, आप ऐसी विराट, ऐसी असीम व पवित्र सत्ता से जुड़े हुए हैं जिसकी न तो कल्पना की जा सकती है और न ही जिसका वर्णन किया जा सकता है – फिर भी मैं उसके बारे में बताने जा रहा हूं। उसके बारे में मैं इसलिए नहीं बता रहा हूं कि आप विश्वास कर लें, बल्कि यह दिखाने के लिए कि आप उसे कैसे जान सकते हैं।"

यही करने में 'प्रैक्टिसिंग द पॉवर ऑफ़ नाउ' आपकी मदद करती है। यह पुस्तक *द पॉवर ऑफ़ नाउ* से आगे बढ़ते हुए और उसके उपदेशों का सार प्रस्तुत करते हुए, हमें बताती है कि "मन की दासता" से खुद को स्वतंत्र कैसे किया जाए। एक्हार्ट हमें बताते हैं कि ध्यान की विधियों तथा अन्य तरीकों के माध्यम से हम अपने विचारों को कैसे शांत कर करें, संसार को वर्तमान पल में कैसे देखें और कैसे उस मार्ग को खोज सकें जो 'गरिमा, सहजता व सुखमय जीवन' की ओर जाता है।

एक्हार्ट के मुंबई से प्रस्थान करने से पहले उनके साथ हुई एक छोटी सी मुलाक़ात के दौरान उन्होंने कहा था कि 'प्रैक्टिसिंग द पॉवर ऑफ़ नाउ' उन लोगों के लिए है जो *द पॉवर ऑफ़ नाउ* का सार-संक्षेप एक ऐसी पुस्तक के रूप में अपने पास रखना चाहते हैं जिसमें वे बारंबार झांक सकें ताकि यह उनके दैनिक जीवन में उन्हें एक चैतन्य अवस्था में

प्रवेश करने और उसमें बने रहने में मदद कर सके। जिन लोगों ने *द पॉवर ऑफ़ नाउ* नहीं पढ़ी है या जो किसी कारण से उससे कुछ घबरा गए हैं, उनके लिए यह पुस्तक उसकी शिक्षाओं को सूत्र रूप में समझने में कदम दर कदम सहायता करेगी।

'वर्तमान पल' के बारे में एक्हार्ट का संदेश किसी स्थान व समय की सीमा में नहीं बंधा है – वह सार्वभौमिक है, शाश्वत है। ज़ेन बौद्धमत को पश्चिम में लाने वाले सेंसी न्योजेन सेनज़ाकी ने 'वर्तमान पल' को अपने शब्दों में कुछ यूं कहा है – "इसे आप अपनी आंखों से देख नहीं सकते। इसे आप अपने हाथों से पकड़ नहीं सकते। इसे आप अपनी नाक से सूंघ नहीं सकते। इसे आप अपने कान से सुन नहीं सकते। इसे आप अपनी जीभ से चख नहीं सकते। इसे आप अपने विचार में कोई रूप-आकार नहीं दे सकते। यह तो साक्षात है – आपके सामने!"

सुखमय, शांतिमय

– गौतम सचदेव
अगस्त 2002

अनुवादक की ओर से

वाक़ई, *द पॉवर ऑफ़ नाउ* (हिंदी अनुवाद: शक्तिमान वर्तमान) एक ऐसी पुस्तक है जिसने विश्व भर में असंख्य लोगों का जीवन प्रभावित किया है, उनका जीवन बदल दिया है। *प्रैक्टिसिंग द पॉवर ऑफ़ नाउ* उसी पुस्तक का सार-संक्षेप है।

यह पुस्तक – *प्रैक्टिसिंग द पॉवर ऑफ़ नाउ* – उनके लिए भी है जिन्होंने इसकी मूल पुस्तक *द पॉवर ऑफ़ नाउ* पढ़ी है, और उनके लिए भी है जिन्होंने उसे नहीं पढ़ा है। जिन्होंने उसे पढ़ा है उनके लिए यह पुस्तक एक संदर्भ ग्रंथ की तरह, *द पॉवर ऑफ़ नाउ* में सविस्तार किए गए मार्गदर्शन को, सूत्र रूप में तत्काल प्रस्तुत कर देगी, और जिन्होंने उसे नहीं पढ़ा है उनके लिए भी यह पुस्तक जीवन के नए व आश्चर्यजनक आयाम खोल देगी, और साथ ही इसकी मूल पुस्तक *द पॉवर ऑफ़ नाउ* को पढ़ने के लिए उन्हें प्रेरित करेगी जिसने कि असंख्य लोगों के जीवन को रूपांतरित कर दिया है।

तथापि, इसमें प्रयुक्त किए गए कुछ शब्दों को स्पष्ट कर देना मैं आवश्यक समझता हूं क्योंकि किसी एक भाषा के किसी शब्द के गूढ़ अर्थ को पूरी तरह दर्शाने वाला कोई शब्द दूसरी भाषा में भी मिल ही जाए, यह सदैव संभव नहीं हो पाता है – विशेषकर अध्यात्म जैसे गंभीर विषय में। इसलिए उस शब्द को अनुवाद करते समय ज्यों का त्यों ही लिखना

अधिक उचित रहता है, जैसे हिंदी के कर्म, निर्वाण, लीला, मोक्ष इत्यादि शब्दों को अंग्रेज़ी अनुवादों में इटैलिक में ज्यों का त्यों ही लिख दिया जाता है ताकि इन शब्दों के अर्थ की मौलिकता बनी रहे, वह संदूषित न हो। ऐसा ही इस पुस्तक के अनुवाद में भी किया गया है, जैसेः

Being: यह शब्द अपने आपमें बहुत कुछ कहता है। हिंदी शब्दकोश इसके लिए अस्तित्व, सत्ता, जीवन, आत्मा, सत्व, वजूद जैसे शब्द सुझाते तो हैं लेकिन इन शब्दों को हिंदी में हम जिन अर्थों मे प्रयुक्त करते हैं वे इसके अर्थ का यथार्थ व पूरा अर्थ नहीं दे पाते हैं। इसलिए, इस शब्द की व्यापकता तथा यथार्थता को बनाए रखने के लिए मैंने इसे यथावत प्रयुक्त किया है – *बीइंग*। *बीइंग* क्या है इसकी स्पष्ट व्याख्या लेखक ने स्वयं इस पुस्तक में कर दी है, इसलिए इसे समझने में पाठकों को कोई कठिनाई नहीं होगी।

Presence: इस शब्द के लिए हिंदी में उपस्थिति, विद्यमानता जैसे शब्द उपलब्ध हैं लेकिन इनमें शारीरिक रूप से मौजूद होने का आभास मिलता है, जब कि लेखक ने इसे एक व्यापक अर्थ में मौजूद रहने के लिए प्रयुक्त किया है। इसलिए सीमित अर्थ वाले इन शब्दों का प्रयोग न करके मैंने इसे ज्यों का त्यों *प्रेज़ैंस* लिखना बेहतर समझा है, हालांकि स्पष्टता की दृष्टि से कहीं-कहीं उपस्थिति तथा विद्यमानता का भी प्रयोग किया है।

Enlightenment: इसके लिए हिंदी में आत्मज्ञान या ज्ञानप्राप्ति का प्रयोग किया जाता है लेकिन यह भी एक व्यापक अर्थ वाला शब्द है और इसलिए इस शब्द को भी मैंने यथावत *एन्लाइटेनमैन्ट* के रूप में ही प्रयुक्त करना उचित समझा है। अच्छी बात यह है कि लेखक ने इस पुस्तक में इस शब्द की भी स्पष्ट व्याख्या कर दी है ताकि इसका अर्थ पूरी तरह से समझ में आ सके।

इस पुस्तक में अनेक स्थानों पर प्रयुक्त किया गया एक हिंदी शब्द है – तादात्म्यता (जिसे अंग्रेज़ी के शब्द identification के लिए प्रयुक्त किया गया है)। तादात्म्यता उस अवस्था को कहते हैं जब आप अपना अस्तित्व किसी दूसरी चीज़ के साथ इतना मिला देते हैं कि आप पूरी

तरह उसके साथ अभिन्न, एकाकार, एकात्म और एकजान हो जाते हैं, उसमें घुल जाते हैं, और खुद भूल कर अपने आपको वही समझने लगते हैं क्योंकि उसकी सोच ही तब आपकी सोच हो जाती है – वह चाहे कोई व्यक्ति हो, पंथ हो, दल हो, या आपका अपना ही मन हो। इस किताब को पढ़ने के लिए इस शब्द को समझना बहुत महत्वपूर्ण है।

अनुवाद को काफ़ी सरल करने का प्रयास किया गया है लेकिन जिस विषय पर यह किताब लिखी गई है चूंकि वह एक गंभीर विषय है इसलिए कहीं-कहीं इसे एकदम तरल जैसा सरल भी नहीं किया जा सकता था। लेकिन कहीं अटक मत जाइयेगा, बल्कि पढ़ते जाइयेगा, क्योंकि आगे चल कर वह बात स्वयं स्पष्ट होती चली जायेगी।

इसकी मूल पुस्तक *द पॉवर ऑफ़ नाउ* में लेखक ने बुद्ध द्वारा दी गई *एन्लाइटेनमैन्ट* की परिभाषा का उल्लेख किया है: 'दुख का अंत हो जाना'। उसी *एन्लाइटेनमैन्ट* के पथ पर आपकी यात्रा का शुभारंभ है यह किताब!

अचलेश शर्मा
मेरठ

भूमिका

एक्हार्ट टॉल्ल

1997 में पहली बार प्रकाशित होने के बाद से, *द पॉवर ऑफ़ नाउ* ने इस धरती की सामूहिक चेतना को इतना प्रभावित किया है जिसकी कि मैंने कल्पना भी नहीं की थी। अभी तक 33 से अधिक भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है, और पूरी दुनिया से पाठकों के मेल मुझे हर दिन मिलते रहते हैं जो कहते हैं कि इस पुस्तक में दी गई शिक्षाओं के संपर्क में आने से उनका तो जीवन ही बदल गया है।

हालांकि अहंकारी मन के पागलपन का प्रभाव अभी भी हर तरफ़ दिखाई पड़ रहा है, लेकिन कुछ नया भी उभर कर आ रहा है। पहले इतने सारे लोग उस सामूहिक मानसिक-ढांचे को तोड़ने के लिए कभी तैयार नहीं थे जिसने कि मानवता को दुख की बेड़ियों में न जाने कब से बांधा हुआ है। चेतना की एक नई अवस्था उदित हो रही है। बहुत दुख उठा चुके हैं हम! अब, इस पल, में वह चेतना आपके मन में भी उदित हो रही है क्योंकि आपके हाथों में यह पुस्तक है और आप उन पंक्तियों को पढ़ रहे हैं जो कि आपको एक दुखमुक्त जीवन जीने की संभावना दिखा रही हैं – एक ऐसा जीवन जीने की संभावना दिखा रही हैं जिसमें आप न तो स्वयं को दुख देने वाले हैं और न ही दूसरों को।

मुझे पत्र लिखने वाले पाठकों में से बहुतों ने यह इच्छा प्रकट की है कि *द पॉवर ऑफ़ नाउ* पुस्तक में दी गईं व्यावहारिक शिक्षाओं का

संकलन एक तुरंत-संदर्भ की जा सकने वाली पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया जाए ताकि वे अपने दैनिक जीवन में उनका उपयोग आसानी से कर सकें। उनके इसी अनुरोध ने मुझे यह पुस्तक लिखने को प्रेरित किया है।

क्रियात्मक अभ्यासों के अलावा, इस पुस्तक में मूल पुस्तक के कुछ छोटे-छोटे अंश भी शामिल किए गए हैं ताकि वे आपको उस बोध तथा उन अवधारणाओं का पुनः पुनः स्मरण करा सकें और प्रतिदिन आपके जीवन का आधार बन सकें।

उन अंशों में से कुछ तो विशेष रूप से गहन चिंतनशील स्वाध्याय के लिए बहुत ही उपयुक्त हैं। जब आप ऐसा गहन चिंतनशील स्वाध्याय करने लगते हैं तब दरअसल आप कोई नया ज्ञान पाने के लिए नहीं पढ़ रहे होते हैं, बल्कि पढ़ते-पढ़ते चेतना की एक विशिष्ट अवस्था में प्रवेश करने के लिए पढ़ रहे होते हैं। इसीलिए, तब आप किसी भी उद्धरण को पुनः पुनः पढ़ सकते हैं, और हर बार वह उद्धरण आपको नया व ताज़ा ही लगता है। केवल वे ही शब्द ऐसी रूपांतरकारी शक्ति रखते हैं जो कि *प्रेज़ैंस* वाली अवस्था में – यानी, वर्तमान में विद्यमान रहने वाली अवस्था में – लिखे या बोले गए होते हैं। और, यह शक्ति पाठक में भी *प्रेज़ैंस* वाली अवस्था को जगा देती है।

अच्छा यह होगा कि इन उद्धरणों को पढ़ने में जल्दबाज़ी न की जाए, बल्कि इन्हें धीरे-धीरे पढ़ा जाए। इन्हें पढ़ते-पढ़ते कई बार ऐसा हो सकता है कि आप थोड़ा थमना चाहें और कुछ पल शांत चिंतन में, या केवल शांतता में उतरना चाहें। या, कभी-कभी इस पुस्तक को उठा कर इसमें कहीं से भी कुछ पक्तियां पढ़ना चाहें।

जो पाठक *द पॉवर ऑफ़ नाउ* को पढ़ने-समझने में कठिनाई अनुभव कर रहे थे, उनको यह पुस्तक उसको पढ़ने-समझने में सहायक सिद्ध होगी।

एक्हार्ट टॉल्ल
9 जुलाई, 2001

भाग एक

वर्तमान की शक्ति प्राप्त करना

जब आपकी चेतना
बहिर्मुखी होती है
तब मन और संसार ही दिखाई देते हैं,
किंतु
जब आपकी चेतना
अंतर्मुखी हो जाती है
तब उसे अपने स्रोत का बोध होता है
और वह अपने घर वापस आकर
अव्यक्त में लीन हो जाती है।

अध्याय एक

बीइंग और *एन्लाइटेनमैन्ट*

जन्म-मरण के अधीन रहने वाले और नानारूप वाले जीवनों से परे परम जीवन भी है जो कि शाश्वत है, अनश्वर-अविनाशी है। उसे बहुत से लोग 'ईश्वर' कहते हैं; उसे ही अधिकतर मैं *बीइंग* कहता हूं। *बीइंग* शब्द कुछ भी बयां नहीं करता, और *ईश्वर* शब्द भी नहीं करता। तथापि, *बीइंग* शब्द के साथ एक अच्छी बात यह है कि यह कोई सीमित व संकुचित अवधारणा वाला शब्द नहीं है। यह शब्द उस असीम-अदृश्य को घटा कर कोई सीमित अस्तित्व नहीं बनाता। इस शब्द की कोई मानसिक छवि बनाना भी संभव नहीं है। कोई इस पर केवल अपना ही आधिपत्य भी नहीं जमा सकता है। यह तो आपका वास्तविक मूल तत्व है, और आपकी अपनी विद्यमानता की अनुभूति के रूप में, यानी मैं यह हूं या मैं वह हूं के बजाय *मैं हूं* के बोध के रूप में – *बीइंग* के रूप में – आपकी तुरंत पहुंच में रहता है। इसलिए, *बीइंग* शब्द के और *बीइंग* को अनुभव करने के बीच का फ़ासला बस एक कदम का है।

> ***बीइंग*, यह जीवन–अस्तित्व, केवल पार व परे ही नहीं है** बल्कि हर रूप के अंदर अपने अंतरतम अदृश्य तथा अविनाशी तत्व रूप में यह विद्यमान रहता है। इसका तात्पर्य यह है कि यह आपकी अंतरात्मा के रूप में, आपके वास्तविक स्वरूप में, अभी ही

उपलब्ध है। लेकिन, अपने मन से इसे पकड़ने का प्रयास मत कीजिएगा। इसे समझने का भी प्रयास मत कीजिएगा।

इसे आप केवल तब जान सकते हैं जब आपका मन बिल्कुल शांत हो, निश्चल हो। जब आपका अवधान पूरी तरह से, प्रगाढ़ रूप से, 'अब' में हो, जब आप 'अब' में विद्यमान हों, तब *बीइंग* को महसूस किया जा सकता है, लेकिन उसे मानसिक स्तर पर कभी नहीं समझा जा सकता।

बीइंग के प्रति सजगता को पुनः प्राप्त कर लेना और इस "अनुभूत-यथार्थ" की अवस्था में बने रहना – यही है आत्मज्ञान, *एन्लाइटेनमैन्ट*।

आत्मज्ञान या *एन्लाइटेनमैन्ट* शब्द में एक अलौकिक व दिव्य उपलब्धि वाली धारणा की कल्पना कर ली गई है, और हमारा अहं इसे इसी रूप में रखना पसंद भी करता है, लेकिन आत्मज्ञान का सीधा-सच्चा अर्थ है अपने *बीइंग* के साथ अभिन्नता की अवस्था में होना, यानी खुद को अपने *बीइंग* से भिन्न न समझने की एक स्वाभाविक अवस्था में रहना। यह किसी ऐसी चीज़ के साथ जुड़ने की अवस्था है जो अपरिमेय है, अविनाशी है, जो कि तत्व रूप में तो वह आप ही है लेकिन फिर भी वह आपसे कहीं अधिक विराट है। नाम और रूप से परे अपने सच्चे स्वरूप को पहचानना है यह।

इस संबद्धता को अनुभव करने में अक्षम होना ही तो पृथकता का व भिन्नता का भ्रम पैदा किया करता है – खुद से भी और अपने चारों तरफ़ के संसार से भी। तब जाने-अनजाने आप स्वयं को एक अलग, विलग खंड के रूप में देखने व महसूस करने लगते हैं। इससे आपमें भय का समावेश हो जाता है और परिणामस्वरूप भीतर-बाहर द्वंद्व का रहना तब एक सामान्य अवस्था बन जाती है।

अपनी संबद्धता के इस सत्य को जानने में जो सबसे बड़ी बाधा आती है वह है आपका अपने मन के साथ तादात्म्य कर लेना, यानी उसके साथ एकात्म हो जाना। ऐसा करना विचार को अनिवार्य बना देता है। विचार को, सोचने को, रोक पाने में असमर्थ होना एक दुखदायी अवस्था है,

एक बड़ा भारी क्लेश है, लेकिन हमें इसका भान इसलिए नहीं हो पाता है क्योंकि लगभग हर कोई इससे पीड़ित रहता है, इसलिए हमने इसे एक सामान्य अवस्था मान लिया है। लगातार चलता यह मानसिक शोर आपको आंतरिक शांति के उस प्रदेश में प्रवेश कर पाने से वंचित कर देता है जो कि *बीइंग* के साथ अपृथक्य रूप से रहा करता है। यह अवस्था एक मिथ्या व मनगढ़ंत अहं को भी रच लेती है जो कि भय और दुख का अंधकार फैला देता है।

अपने मन के साथ खुद को तादात्मय कर लेना धारणाओं, लेबलों, छवियों, निष्कर्षों और परिभाषाओं का एक ऐसा धुंधला परदा बना देता है जो कि सभी सच्चे संबंधों में बाधक बन जाता है। यह परदा आपके और स्वयं आपके बीच, आपके और आपके संगी-साथियों के बीच, आपके और प्रकृति के बीच, आपके और ईश्वर के बीच आ जाता है। यह विचार का परदा ही है जो कि पृथकता का, अलगाव का भ्रम पैदा कर देता है – यह भ्रम कि एक आप हैं *और* एक बिल्कुल अलग "कोई और" है।

मन एक बहुत ही उत्कृष्ट उपकरण है, बशर्ते कि इसका सही तरह इस्तेमाल किया जाए। लेकिन, ग़लत तरीके से इस्तेमाल किए जाने पर यह बड़ा विनाशकारी भी हो जाता है। और भी स्पष्ट रूप से कहा जाए तो बात केवल इतनी ही नहीं है कि आप अपने मन का इस्तेमाल ग़लत तरीके से करते हैं, बल्कि आमतौर तो आप उसका इस्मेताल करते ही नहीं हैं – दरअसल, वह ही *आपका* इस्तेमाल किया करता है। असल रोग यही है। आप समझते हैं कि आप अपना मन है। यह भ्रांति है, भ्रम है, मिथ्या आभास है। इसका अर्थ तो यह है कि यह उपकरण आप पर हावी हो चुका है – आप उसके वशीभूत हो गएँ हैं।

यह लगभग ऐसा ही है जैसे आपके दिलोदिमाग पर कोई हावी हो जाए और आपको इस बात का पता भी न हो, और फिर हावी होने वाले के स्वरूप को ही आप अपना स्वरूप समझने लगें।

स्वतंत्र होने का शुभारंभ इस ज्ञान से होता है कि जो आप पर हावी है वह आप नहीं हैं, आप उससे अलग हैं – यानी आप

विचारकर्ता नहीं हैं, विचार से अलग हैं। यह जानना आपको अपने स्वरूप को देखने की क्षमता प्रदान करता है। जब आप *विचारकर्ता को देखना, उसका अवलोकन करना* आरंभ कर देते हैं, तब चैतन्यता का एक उच्च स्तर आपमें सक्रिय हो उठता है।

तब आपको यह बोध होना आरंभ हो जाता है कि विचार से परे प्रज्ञा का एक विशाल साम्राज्य भी है, कि विचार तो उस प्रज्ञा का एक क्षुद्र, एक नगण्य पहलू मात्र है। तब आपको यह भी बोध हो जाता है कि सचमुच महत्व वाली चीज़ें – जैसे सौंदर्य, प्रेम, रचनात्मकता, हर्ष, आंतरिक शांति – ये सब मन में नहीं पैदा होते बल्कि मन के पार ही पैदा होते हैं।

तब, आप जागना, चैतन्य होना आरंभ करते हैं।

खुद को अपने मन के चंगुल से आज़ाद करना

अच्छी बात यह है कि आप खुद को अपने मन से आज़ाद *कर सकते हैं,* और यही होती है सच्ची मुक्ति। इसका पहला कदम तो आप अभी के अभी उठा सकते हैं।

जब भी हो सके, आप अपने सिर के अंदर बोलती आवाज़ को ध्यान से सुनना शुरू कीजिए। बार-बार आने वाले उन विचारों के ढर्रे पर विशेष ध्यान दीजिए जो ऑडियो टेप की तरह आपके सिर में शायद वर्षों से बजते आ रहे हैं।

"विचारकर्ता का अवलोकन" करने का मेरा यही अर्थ है, इसका का छोटा सा सूत्र यह है: अपने सिर में बोलती आवाज़ को ध्यान से सुनिए, एक साक्षी के रूप में वहां उपस्थित रहिए।

जब आप उस आवाज़ को सुनें तो निष्पक्ष हो कर सुनें, यानी उसके बारे में कोई निर्णय-निष्कर्ष न निकालें। जो आप सुनें उसकी कोई निंदा-आलोचना भी न करें और न ही किसी नतीजे पर पहुंचें, क्योंकि ऐसा करने का अर्थ तो यही होगा कि वही आवाज़ पिछले दरवाज़े से दोबारा आपके अंदर प्रवेश कर गई है। फिर, आपको प्रत्यक्ष अनुभव होने लगेगा: एक आवाज़ है, और उसे *मैं सुन रहा हूं,* ध्यान से सुन रहा हूं। यह *मैं सुन रहा हूं* वाला बोध, आपके स्वयं वहां उपस्थित होने का यह भाव, यह कोई विचार नहीं होता है। यह बोध तो मन के पार से आ रहा होता है।

इस तरह से जब आप अपना कोई विचार सुनते हैं, तब आप केवल उस विचार के प्रति ही सजग नहीं रहते हैं बल्कि उस विचार के साक्षी के रूप में खुद के प्रति भी सजग रहते हैं। तब चैतन्यता का एक नया ही आयाम आप में आ गया होता है।

जब आप उस विचार को सुनते हैं, तो उस विचार के पीछे या उसके नीचे-नीचे आप एक चैतन्य उपस्थिति को – अपने गहन स्वरूप को – अनुभव करते हैं। ऐसे में, वह विचार आप पर हावी होने की अपनी शक्ति खो देता है और शीघ्र ही तिरोहित हो जाता है, क्योंकि तब आप मन के साथ तादात्म्यता न करने के कारण मन को कोई ऊर्जा नहीं दे रहे होते हैं। बेइरादा, बेइख्तियार और खुद-ब-खुद चलने वाली मनोग्रस्त विचार प्रक्रिया के अंत की शुरुआत होती है यह।

कोई विचार जब तिरोहित हो जाता है तब आप अपने मन की धाराप्रवाहता में एक विराम, एक अवकाश महसूस करते हैं – 'मन की अनुपस्थिति' जैसा एक अंतराल महसूस करते हैं। पहले-पहल तो यह अंतराल छोटे-छोटे ही होंगे, शायद कुछ पलों के ही हों, लेकिन धीरे-धीरे ये अंतराल लंबे होते चले

जायेंगे। जब ये अंतराल आते हैं तब आप अपने भीतर एक तरह का ठहराव और शांति महसूस करते हैं। *बीइंग* के साथ एकता अनुभव करने वाली सहज-स्वाभाविक अवस्था की शुरुआत होती है यह, जिसे कि अभी तक आपके मन द्वारा दुरूह तथा दुर्गम बनाया जाता रहा था।

अभ्यास करते-करते, ठहराव, स्थिरता, नीरवता और शांति का यह अहसास, यह अनुभूति गहन से गहनतर होती जायेगी। दरअसल, इस गहनता की कोई थाह नहीं होती है। तब, आप अपने भीतर गहराई से आते हुए आनंद के एक सूक्ष्म आविर्भाव को महसूस करेंगे: *बीइंग* का आनंद होगा यह।

भीतरी संबद्धता व जुड़ाव की इस अवस्था में, आप मन के साथ तादात्म्य में रहने की अवस्था की अपेक्षा कहीं अधिक जागरूक, कहीं अधिक प्रबुद्ध रहते हैं। आप पूरी तरह उपस्थित रहते हैं, विद्यमान रहते हैं। यह अवस्था उस ऊर्जा क्षेत्र की स्पंदन आवृत्ति को भी बढ़ा देती है जो हमारे शरीर को जीवन देता है।

'मन की अनुपस्थिति' वाले इस प्रदेश में जब आप और भी गहरे में जाते हैं, तब आप विशुद्ध चैतन्यता की अवस्था अनुभव करते हैं। इस अवस्था में, आपको अपनी ही उपस्थिति इतनी सघनता के साथ, इतने आनंद के साथ अनुभूत होती है कि उसकी तुलना में आपकी तमाम विचारणा, तमाम भावनाएं, पंचतत्वों का आपका यह शरीर, और समूचा बाहरी संसार – ये सब अपेक्षाकृत महत्वहीन और नगण्य हो जाते हैं। लेकिन फिर भी, यह कोई स्वार्थपरता वाली अवस्था नहीं होती, बल्कि अंतर्हितता वाली अवस्था रहती है। अभी तक जिसे आप "स्वयं आप" के रूप में देखते-समझते आए थे, उससे यह आपको पार और परे ले जाती है। यह उपस्थिति सारभूत रूप से आप स्वयं होते हैं किंतु अबोध्य और असीम रूप से यह आप से विराट भी होती है।